

## Chapter बारह

### श्रीमद्भागवत की संक्षिप्त विषय-सूची

इस अध्याय में श्री सूत गोस्वामी श्रीमद्भागवत में विवेचित विषयों का संक्षेप प्रस्तुत करते हैं।

भगवान् श्री हरि उस व्यक्ति का सारा कष्ट स्वयं हर लेते हैं, जो उनकी महिमा का श्रवण करता है। जिन शब्दों से भगवान् के असंख्य दिव्य गुणों की स्तुति की जाती है वे सत्य, शुभ तथा शुद्धिदायक हैं जबकि अन्य सारे शब्द अशुद्ध होते हैं। भगवान् सम्बन्धी कथाओं की चर्चा आनन्द प्रदान करती है और यह आनन्द सदैव नवीन बना रहता है किन्तु वे व्यक्ति जो कौओं के समान हैं, व्यर्थ की कथाओं में लीन रहते हैं, जो भगवान् से सम्बन्धित नहीं होतीं।

श्री हरि के असंख्य नामों से जो उनके यशस्वी गुणों का वर्णन करने वाले हैं, कीर्तन तथा श्रवण से सारे मनुष्य अपने पापों से छूट सकते हैं। चाहे वह भगवान् विष्णु की भक्ति से विहीन ज्ञान हो, चाहे उन्हें अर्पित न किया गया सकाम कर्म हो, किसी सच्चे सौन्दर्य से युक्त नहीं होता है। किन्तु भगवान् कृष्ण का निरन्तर स्मरण करने से मनुष्य की सारी अशुभ इच्छाएँ विनष्ट हो जाती हैं, मन शुद्ध बन जाता है और वह साक्षात्कार तथा वैराग्य से पूर्ण ज्ञान के साथ भगवान् श्री हरि की

भक्ति प्राप्त करता है।

तत्पश्चात् सूत गोस्वामी बतलाते हैं कि कुछ समय पहले, उन्होंने महाराज परीक्षित की सभा में श्री शुकदेव गोस्वामी के मुख से श्रीकृष्ण की महिमाओं का श्रवण किया था, जो सारे पापों को नष्ट करने वाली हैं और अब उन्हीं महिमाओं को नैमिषारण्य के ऋषियों को उन्होंने सुनाया है। श्रीमद्भागवत सुनने से आत्मा शुद्ध होती है और सभी पापों तथा सभी प्रकार के भय से मोक्ष प्राप्त करती है। इस शास्त्र के अध्ययन से वैसा ही फल प्राप्त होता है जैसाकि वेदों के अध्ययन से मिलता है और मनुष्य की सारी इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं। संयमित मन से समस्त पुराणों के इस महत्त्वपूर्ण संग्रह को पढ़ने से मनुष्य को परम भगवद्धाम प्राप्त होता है। इस श्रीमद्भागवत के हर श्लोक में असंख्य स्वरूपों वाले श्री हरि की कथाएँ हैं।

अन्त में श्री सूत अजन्मे तथा अनन्त परमात्मा श्रीकृष्ण के साथ ही व्यासपुत्र श्री शुकदेव को भी नमस्कार करते हैं, जो जीवों के सारे पाप विनष्ट करने में सक्षम हैं।

सूत उवाच

नमो धर्माय महते नमः कृष्णाय वेधसे ।

ब्रह्मणेभ्यो नमस्कृत्य धर्मान्वक्ष्ये सनातनान् ॥ १ ॥

शब्दार्थ

सूतः उवाच—सूत गोस्वामी ने कहा; नमः—नमस्कार; धर्माय—धर्म को; महते—महानतम; नमः—नमस्कार; कृष्णाय—कृष्ण को; वेधसे—स्रष्टा; ब्रह्मणेभ्यः—ब्राह्मणों को; नमस्कृत्य—नमस्कार करके; धर्मान्—धर्म को; वक्ष्ये—कहूँगा; सनातनान्—शाश्वत।

सूत गोस्वामी ने कहा : परम धर्म भक्ति को, परम स्रष्टा भगवान् कृष्ण को तथा समस्त ब्राह्मणों को नमस्कार करके, अब मैं धर्म के शाश्वत सिद्धान्तों का वर्णन करूँगा।

तात्पर्य : इस अध्याय में सूत गोस्वामी प्रथम स्कन्ध से लेकर बारहवें स्कन्ध तक श्रीमद्भागवत की सारी कथाओं का सार प्रस्तुत करेंगे।

एतद्भुवः कथितं विप्रा विष्णोश्चरितमद्भुतम् ।

भवद्भिर्यदहं पृष्टो नराणां पुरुषोचितम् ॥ २ ॥

शब्दार्थ

एतत्—ये; वः—तुम सबों को; कथितम्—सुनाया; विप्राः—हे ऋषियो; विष्णोः—भगवान् विष्णु की; चरितम्—लीलाएँ; अद्भुतम्—अद्भुत; भवद्भिः—आप लोगों द्वारा; यत्—जो; अहम्—मैं; पृष्टः—पूछा गया; नराणाम्—मनुष्यों में से; पुरुष—वास्तविक मनुष्य के लिए; उचितम्—उपयुक्त।

हे ऋषियो, मैं आप लोगों से भगवान् विष्णु की अद्भुत लीलाएँ कह चुका हूँ, क्योंकि आप लोगों ने इनके विषय में मुझसे पूछा था। ऐसी कथाओं का सुनना उस व्यक्ति के लिए उचित है, जो वास्तव में मानव है।

तात्पर्य : नराणाम् पुरुषोचितम् शब्द सूचित करते हैं कि जो पुरुष तथा स्त्रियाँ आदर्श मानव

जीवन को प्राप्त हैं, वे भगवान् की महिमाओं का श्रवण और कीर्तन करते हैं किन्तु असभ्य लोगों को ईश-विज्ञान में रुचि नहीं होती।

अत्र सङ्कीर्तितः साक्षात्सर्वपापहरो हरिः ।

नारायणो हृषीकेशो भगवान्सात्वताम्पतिः ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

अत्र—यहाँ, श्रीमद्भागवत में; सङ्कीर्तितः—पूरी तरह प्रशंसित; साक्षात्—प्रत्यक्ष; सर्व-पाप—सारे पापों का; हरिः—हर्ता; हरिः—भगवान् हरि; नारायणः—नारायण; हृषीकेशः—हृषीकेश; भगवान्—भगवान्; सात्वताम्—यदुओं के; पतिः—स्वामी।

यह ग्रंथ उन भगवान् श्री हरि का पूर्ण गुणगान करने वाला है, जो अपने भक्तों के सारे पापों को दूर करने वाले हैं। भगवान् का यह गुणगान नारायण, हृषीकेश तथा सात्वतों के प्रभु के रूप में किया गया है।

तात्पर्य : भगवान् कृष्ण के अनेक पावन नाम उनके असामान्य दिव्य गुणों के सूचक हैं। हरि नाम सूचित करता है कि भगवान् अपने भक्त के हृदय के सारे पापों को दूर करने वाले हैं। नारायण सूचित करता है कि भगवान् सारे अन्य जीवों का भरण-पोषण करते हैं। हृषीकेश सूचित करता है कि भगवान् कृष्ण सारे जीवों की इन्द्रियों के परम नियन्ता हैं। भगवान् शब्द सूचित करता है कि भगवान् कृष्ण सर्वाकर्षक परम पुरुष हैं। सात्वताम् पतिः सूचित करता है कि भगवान् स्वभाव से साधु तथा धार्मिक पुरुषों के, विशेष रूप से उच्च यदुवंश के सदस्यों के, स्वामी हैं।

अत्र ब्रह्म परं गुह्यं जगतः प्रभवाप्ययम् ।

ज्ञानं च तदुपाख्यानं प्रोक्तं विज्ञानसंयुतम् ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

अत्र—यहाँ; ब्रह्म—परब्रह्म; परम्—परम; गुह्यम्—गोपनीय; जगतः—इस ब्रह्माण्ड के; प्रभव—सृष्टि; अप्ययम्—तथा संहार; ज्ञानम्—ज्ञान; च—तथा; तत्-उपाख्यानम्—उसका अनुशीलन करने के साधन; प्रोक्तम्—कहे हुए; विज्ञान—दिव्य अनुभूति; संयुतम्—से युक्त।

यह ग्रंथ इस ब्रह्माण्ड के सृजन तथा संहार के स्रोत परब्रह्म के रहस्य का वर्णन करता है। यही नहीं, इसमें उनके दैवी ज्ञान के साथ साथ उसके अनुशीलन की विधि तथा मनुष्य द्वारा प्राप्त होने वाली दिव्य अनुभूति का भी वर्णन हुआ है।

भक्तियोगः समाख्यातो वैराग्यं च तदाश्रयम् ।

पारीक्षितमुपाख्यानं नारदाख्यानमेव च ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

भक्ति-योगः—भक्ति की विधि; समाख्यातः—भलीभाँति कही गई; वैराग्यम्—वैराग्य; च—तथा; तत्-आश्रयम्—उससे गौण; पारीक्षितम्—महाराज परीक्षित का; उपाख्यानम्—इतिहास; नारद—नारद का; आख्यानम्—इतिहास; एव—निस्सन्देह; च—भी।

इसमें भक्ति की विधि के साथ साथ वैराग्य का गौण स्वरूप तथा महाराज परीक्षित एवं नारद मुनि के इतिहास का भी वर्णन हुआ है।

प्रायोपवेशो राजर्षेर्विप्रशापात्परीक्षितः ।

शुकस्य ब्रह्मर्षभस्य संवादश्च परीक्षितः ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

प्राय-उपवेशः—आमरण उपवास; राज-ऋषेः—राजर्षि के; विप्र-शापात्—ब्राह्मण-पुत्र के शाप के कारण; परीक्षितः—राजा परीक्षित का; शुकस्य—शुकदेव की; ब्रह्म-ऋषभस्य—ब्राह्मण-श्रेष्ठ; संवादः—वार्ता; च—तथा; परीक्षितः—परीक्षित से।

इसके साथ ही ब्राह्मण-पुत्र के शाप के शमनार्थ परीक्षित का आमरण उपवास करना तथा परीक्षित और ब्राह्मण-श्रेष्ठ शुकदेव के मध्य हुई वार्ता का भी वर्णन हुआ है।

योगधारणयोत्क्रान्तिः संवादो नारदाजयोः ।

अवतारानुगीतं च सर्गः प्राधानिकोऽग्रतः ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

योग-धारणया—योग में ध्यान स्थिर करके; उत्क्रान्तिः—मृत्यु के समय मोक्ष-लाभ; संवादः—वार्ता; नारद-अजयोः—नारद तथा ब्रह्मा के बीच; अवतार-अनुगीतम्—भगवान् के अवतारों की सूची प्रस्तुत करना; च—तथा; सर्गः—सृष्टि क्रिया; प्राधानिकः—अव्यक्त प्रकृति से; अग्रतः—आगे-आगे।

भागवत बतलाती है कि किस तरह योग में ध्यान स्थिर करके मृत्यु के समय मोक्ष प्राप्त किया जा सकता है। इसमें नारद तथा ब्रह्मा के बीच हुई वार्ता, भगवान् के अवतारों की गणना तथा भौतिक प्रकृति की अव्यक्त अवस्था से लेकर क्रमशः यह ब्रह्माण्ड जिस तरह बना, उसका भी वर्णन हुआ है।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर बतलाते हैं कि श्रीमद्भागवत में निहित विभिन्न विवरणों तथा विषयों की पूरी सूची प्रस्तुत कर पाना कठिन होगा। इसलिए यह समझना चाहिए कि सूत गोस्वामी इन विषयों का सारांश दे रहे हैं। वे जिन विषयों का उल्लेख नहीं कर पाये, उनके विषय में हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि वे कम महत्वपूर्ण अथवा व्यर्थ हैं क्योंकि श्रीमद्भागवत का हर अक्षर तथा शब्द सर्वोच्च, कृष्णभावनाभावित ध्वनि है।

विदुरोद्धवसंवादः क्षत्त्रमैत्रेययोस्ततः ।

पुराणसंहिताप्रश्नो महापुरुषसंस्थितिः ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

विदुर-उद्धव—विदुर तथा उद्धव के बीच हुई; संवादः—चर्चा; क्षत्त्र-मैत्रेययोः—विदुर तथा मैत्रेय के बीच; ततः—तब; पुराण-संहिता—पुराणों के संकलन के विषय में; प्रश्नः—प्रश्न; महा-पुरुष—भगवान् के भीतर; संस्थितिः—सृष्टि का लय।

इस शास्त्र में उद्धव तथा मैत्रेय के साथ विदुर के संवादों, इस पुराण के विषय में प्रश्न

तथा प्रलय के समय भगवान् के शरीर में सृष्टि के विलीन होने का भी वर्णन हुआ है।

ततः प्राकृतिकः सर्गः सप्त वैकृतिकाश्च ये ।

ततो ब्रह्माण्डसम्भूतिर्वैराजः पुरुषो यतः ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

ततः—तब; प्राकृतिकः—भौतिक प्रकृति से; सर्गः—सृष्टि; सप्त—सात; वैकृतिकाः—विकारों से उत्पन्न सृष्टि की अवस्थाएँ; च—तथा; ये—जो; ततः—तत्पश्चात्; ब्रह्म-अण्ड—ब्रह्माण्ड के अंडे का; सम्भूतिः—निर्माण; वैराजः पुरुषः—भगवान् का विश्व रूप; यतः—जिससे।

प्रकृति के गुणों के क्षोभ से उत्पन्न सृष्टि, तात्विक विकारों से विकास की सात अवस्थाएँ तथा उस विश्व अंडे का निर्माण जिससे भगवान् के विश्व रूप का उदय होता है—इन सबों का इसमें पूरी तरह वर्णन हुआ है।

कालस्य स्थूलसूक्ष्मस्य गतिः पद्मसमुद्भवः ।

भुव उद्भरणोऽम्भोधेर्हिरण्याक्षवधो यथा ॥ १० ॥

शब्दार्थ

कालस्य—काल की; स्थूल-सूक्ष्मस्य—स्थूल तथा सूक्ष्म; गतिः—गति; पद्म—कमल का; समुद्भवः—उत्पन्न होना; भुवः—पृथ्वी का; उद्भरणे—उद्धार करने के सम्बन्ध में; अम्भोधेः—सागर से; हिरण्याक्ष-वधः—हिरण्याक्ष का वध; यथा—जिस तरह हुआ।

अन्य विषयों में काल की स्थूल तथा सूक्ष्म गतियाँ, गर्भोदकशायी विष्णु की नाभि से कमल की उत्पत्ति तथा हिरण्याक्ष असुर का वध जब गर्भोदक सागर से पृथ्वी का उद्धार हुआ, सम्मिलित हैं।

ऊर्ध्वतिर्यग्वाक्सर्गो रुद्रसर्गस्तथैव च ।

अर्धनारीश्वरस्याथ यतः स्वायम्भुवो मनुः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

ऊर्ध्व—उच्च योनियों, अर्थात् देवताओं का; तिर्यक्—पशुओं का; अवाक्—तथा निम्न योनियों का; सर्गः—सृजन; रुद्र—शिव की; सर्गः—उत्पत्ति; तथा—और; एव—निस्सन्देह; च—भी; अर्ध-नारी—आधे पुरुष तथा आधे नारी रूप में; ईश्वरस्य—ईश्वर का; अथ—तब; यतः—जिससे; स्वायम्भुवः मनुः—स्वायंभुव मनु।

भागवत में देवताओं, पशुओं तथा आसुरी योनियों की उत्पत्ति, भगवान् रुद्र के जन्म तथा अर्धनारीश्वर से स्वायम्भुव मनु के प्राकट्य का भी वर्णन हुआ है।

शतरूपा च या स्त्रीणामाद्या प्रकृतिरुत्तमा ।

सन्तानो धर्मपत्नीनां कर्दमस्य प्रजापतेः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

शतरूपा—शतरूपा; च—तथा; या—जो; स्त्रीणाम्—स्त्रियों की; आद्या—पहली; प्रकृतिः—प्रिया; उत्तमा—उत्तम;  
सन्तानः—सन्तान; धर्म-पत्नीनाम्—पवित्र पत्नियों की; कर्दमस्य—कर्दम ऋषि की; प्रजापतेः—प्रजापति ।

इसमें प्रथम स्त्री शतरूपा, जोकि मनु की उत्तम प्रिया थीं तथा प्रजापति कर्दम की पवित्र पत्नियों की सन्तान का भी वर्णन हुआ है ।

अवतारो भगवतः कपिलस्य महात्मनः ।

देवहृत्याश्च संवादः कपिलेन च धीमता ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

अवतारः—अवतरण; भगवतः—भगवान्; कपिलस्य—कपिल का; महा-आत्मनः—परमात्मा; देवहृत्याः—देवहृति का;  
च—तथा; संवादः—संवाद; कपिलेन—कपिल के साथ; च—तथा; धी-मता—बुद्धिमान ।

भागवत में महान् कपिल मुनि के रूप में भगवान् के अवतार का और इस विद्वान् महात्मा तथा उनकी माता देवहृति के बीच हुई वार्ता का अंकन है ।

नवब्रह्मसमुत्पत्तिर्दक्षयज्ञविनाशनम् ।

ध्रुवस्य चरितं पश्चात्पृथोः प्राचीनबर्हिषः ॥ १४ ॥

नारदस्य च संवादस्ततः प्रैयव्रतं द्विजाः ।

नाभेस्ततोऽनुचरितमृषभस्य भरतस्य च ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

नव-ब्रह्म—नौ ब्राह्मणों ( मरीचि आदि ब्रह्मा के पुत्रों ) की; समुत्पत्तिः—सन्तानें; दक्ष-यज्ञ—दक्ष द्वारा सम्पन्न यज्ञ का;  
विनाशनम्—विध्वंस; ध्रुवस्य—ध्रुव महाराज का; चरितम्—इतिहास; पश्चात्—तब; पृथोः—राजा पृथु का;  
प्राचीनबर्हिषः—प्राचीनबर्हि का; नारदस्य—नारद मुनि का; च—तथा; संवादः—संवाद; ततः—तत्पश्चात्; प्रैयव्रतम्—  
महाराज प्रियव्रत की कथा; द्विजाः—हे ब्राह्मणो; नाभेः—नाभि का; ततः—तब; अनुचरितम्—जीवन चरित्र; ऋषभस्य—  
राजा ऋषभ का; भरतस्य—भरत महाराज का; च—तथा ।

इसमें नौ महान् ब्राह्मणों की सन्तानों, दक्ष के यज्ञ के विध्वंस तथा ध्रुव महाराज के इतिहास, तत्पश्चात् राजा पृथु एवं राजा प्राचीनबर्हि की कथाओं, प्राचीनबर्हि तथा नारद के बीच संवाद तथा महाराज प्रियव्रत के जीवन का वर्णन हुआ है । तत्पश्चात् हे ब्राह्मणो, भागवत में राजा नाभि, भगवान् ऋषभ तथा राजा भरत के चरित्र एवं कार्यों का वर्णन मिलता है ।

द्वीपवर्षसमुद्राणां गिरिनद्युपवर्णनम् ।

ज्योतिश्चक्रस्य संस्थानं पातालनरकस्थितिः ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

द्वीप-वर्ष-समुद्राणाम्—द्वीपों, बड़े द्वीपों तथा समुद्रों का; गिरि-नदी—पर्वतों तथा नदियों का; उपवर्णनम्—विस्तृत वर्णन;  
ज्योतिः-चक्रस्य—स्वर्गिक मण्डल की; संस्थानम्—व्यवस्था; पाताल—अधोलोकों की; नरक—तथा नरक की;  
स्थितिः—स्थिति ।

भागवत में पृथ्वी के महाद्वीपों, वर्षों, समुद्रों, पर्वतों तथा नदियों का विस्तृत वर्णन मिलता है। इसमें स्वर्गिक मण्डल की व्यवस्था तथा पाताल और नरक में विद्यमान स्थितियों का भी वर्णन हुआ है।

दक्षजन्म प्रचेतोभ्यस्तत्पुत्रीणां च सन्ततिः ।  
यतो देवासुरनरास्तिर्यङ्मनगखगादयः ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

दक्ष-जन्म—दक्ष का जन्म; प्रचेतोभ्यः—प्रचेताओं से; तत्-पुत्रीणाम्—उसकी पुत्रियों की; च—तथा; सन्ततिः—सन्तान;  
यतः—जिससे; देव-असुर-नराः—देवता, असुर तथा मनुष्य; तिर्यक्-नग-खग-आदयः—पशु, सर्प, पक्षी आदि योनियाँ।

इसमें प्रचेताओं के पुत्र रूप में प्रजापति दक्ष का पुनर्जन्म तथा दक्ष की पुत्रियों की संतति जिससे देवताओं, असुरों, मनुष्यों, पशुओं, सर्पों, पक्षियों आदि की जातियाँ प्रारम्भ हुई—इन सबों का वर्णन हुआ है।

त्वाष्ट्रस्य जन्मनिधनं पुत्रयोश्च दितेर्द्विजाः ।  
दैत्येश्वरस्य चरितं प्रह्लादस्य महात्मनः ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

त्वाष्ट्रस्य—त्वष्टा के पुत्र ( वृत्र ) का; जन्म-निधनम्—जन्म तथा मृत्यु; पुत्रयोः—दो पुत्रों, हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकशिपु का;  
च—तथा; दितेः—दिति का; द्विजाः—हे ब्राह्मणो; दैत्य-ईश्वरस्य—सबसे बड़े दैत्य; चरितम्—इतिहास; प्रह्लादस्य—प्रह्लाद का; महा-आत्मनः—महात्मा।

हे ब्राह्मणो, भागवत में वृत्रासुर के तथा दिति-पुत्र हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु के जन्मों तथा मृत्युओं का और उसी के साथ दिति के महानतम वंशज, महात्मा प्रह्लाद, के इतिहास का वर्णन हुआ है।

मन्वन्तरानुकथनं गजेन्द्रस्य विमोक्षणम् ।  
मन्वन्तरावताराश्च विष्णोर्हयशिरादयः ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

मनु-अन्तर—विभिन्न मनुओं के शासनों के; अनुकथनम्—विस्तृत विवरण; गज-इन्द्रस्य—हाथियों के राजा का;  
विमोक्षणम्—मोक्ष; मनु-अन्तर-अवताराः—प्रत्येक मन्वन्तर में भगवान् के विशिष्ट अवतार; च—तथा; विष्णोः—भगवान् विष्णु के; हयशिर-आदयः—यथा हयशीर्ष।

इसमें प्रत्येक मनु का शासनकाल, गजेन्द्र के मोक्ष तथा प्रत्येक मन्वन्तर में भगवान् विष्णु के विशिष्ट अवतारों, यथा भगवान् हयशीर्ष, का भी वर्णन है।

कौर्म मात्स्यं नारसिंहं वामनं च जगत्पतेः ।  
क्षीरोदमथनं तद्दमृताथै दिवौकसाम् ॥ २० ॥

शब्दार्थ

कौर्मम्—कछुए के रूप में अवतार; मात्स्यम्—मछली का; नारसिंहम्—नृसिंह के रूप में; वामनम्—वामन के रूप में; च—तथा; जगत्-पते:—ब्रह्माण्ड के स्वामी का; क्षीर-उद—दूध के सागर का; मथनम्—मन्थन; तद्वत्—इस प्रकार; अमृत-अर्थ—अमृत के हेतु; दिव-ओकसाम्—स्वर्ग के निवासियों द्वारा।

भागवत में कूर्म, मत्स्य, नरसिंह तथा वामन के रूप में ब्रह्माण्ड के स्वामी के प्राकट्यों एवं अमृत प्राप्ति के लिए देवताओं द्वारा क्षीर सागर के मन्थन का भी वर्णन है।

देवासुरमहायुद्धं राजवंशानुकीर्तनम् ।

इक्ष्वाकुजन्म तद्वंशः सुद्युम्नस्य महात्मनः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

देव-असुर—देवताओं तथा असुरों का; महा-युद्धम्—महान् युद्ध; राज-वंश—राजाओं के वंशों का; अनुकीर्तनम्—एक-एक करके सुनाया जाना; इक्ष्वाकु-जन्म—इक्ष्वाकु का जन्म; तत्-वंशः—उसका वंश; सुद्युम्नस्य—तथा सुद्युम्न का (वंश); महा-आत्मनः—महात्मा।

देवताओं तथा असुरों के बीच लड़ा गया महायुद्ध, विभिन्न राजाओं के वंशों का क्रमबद्ध वर्णन तथा इक्ष्वाकु के जन्म, उसके वंश एवं महात्मा सुद्युम्न के वंश से सम्बन्धित कथाएँ—इन सबों को इस ग्रंथ में प्रस्तुत किया गया है।

इलोपाख्यानमत्रोक्तं तारोपाख्यानमेव च ।

सूर्यवंशानुकथनं शशादाद्या नृगादयः ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

इला-उपाख्यानम्—इला का इतिहास; अत्र—इसमें; उक्तम्—कहा गया है; तारा-उपाख्यानम्—तारा का इतिहास; एव—निस्सन्देह; च—भी; सूर्य-वंश—सूर्यदेव के वंश की; अनुकथनम्—कथा; शशाद-आद्याः—शशाद इत्यादि; नृग-आदयः—नृग इत्यादि।

इसमें इला तथा तारा के इतिहास तथा सूर्य देव के वंशजों का जिनमें शशाद तथा नृग जैसे राजा सम्मिलित हैं, वर्णन हुआ है।

सौकन्यं चाथ शर्यातिः ककुत्स्थस्य च धीमतः ।

खट्वाङ्गस्य च मान्धातुः सौभरेः सगरस्य च ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

सौकन्यम्—सुकन्या की कथा; च—तथा; अथ—तब; शर्यातिः—शर्याति की; ककुत्स्थस्य—ककुत्स्थ की; च—तथा; धी-मतः—बुद्धिमान राजा; खट्वाङ्गस्य—खट्वांग की; च—तथा; मान्धातुः—मान्धाता की; सौभरेः—सौभरि की; सगरस्य—सगर की; च—तथा।

इसमें सुकन्या, शर्याति, बुद्धिमान ककुत्स्थ, खट्वांग, मान्धाता, सौभरि तथा सगर की कथाएँ कही गई हैं।

रामस्य कोशलेन्द्रस्य चरितं किल्बिषापहम् ।

निमेरङ्गपरित्यागो जनकानां च सम्भवः ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

रामस्य— भगवान् रामचन्द्र की; कोशल-इन्द्रस्य—कोशल के राजा; चरितम्—लीलाएँ; किल्बिष-अपहम्—समस्त पापों को भगाने वाली; निमेः—राजा निमि का; अङ्ग-परित्यागः—शरीर त्याग; जनकानाम्—जनक के वंशजों की; च—तथा; सम्भवः—उत्पत्ति ।

भागवत में कोशल के राजा भगवान् रामचन्द्र की पवित्रकारिणी लीलाओं का वर्णन है और उसी के साथ यह भी बताया गया है कि राजा निमि ने किस तरह अपना भौतिक शरीर छोड़ा। इसमें राजा जनक के वंशजों की उत्पत्ति का भी उल्लेख हुआ है।

रामस्य भार्गवेन्द्रस्य निःक्षतृईकरणं भुवः ।

ऐलस्य सोमवंशस्य ययातेर्नहुषस्य च ॥ २५ ॥

दौष्मन्तेर्भरतस्यापि शान्तनोस्तत्सुतस्य च ।

ययातेर्ज्येष्ठपुत्रस्य यदोर्वंशोऽनुकीर्तितः ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

रामस्य—परशुराम का; भार्गव-इन्द्रस्य—भृगु मुनि के वंशजों में सबसे महान्; निःक्षत्री-करणम्—सारे क्षत्रियों का निष्कासन; भुवः—पृथ्वी के; ऐलस्य—महाराज ऐल का; सोम-वंशस्य—चन्द्र देव के वंश का; ययातेः—ययाति का; नहुषस्य—नहुष का; च—तथा; दौष्मन्तेः—दुष्मन्त के पुत्र; भरतस्य—भरत का; अपि—भी; शान्तनोः—राजा शान्तनु का; तत्—उसका; सुतस्य—पुत्र, भीष्म का; च—तथा; ययातेः—ययाति के; ज्येष्ठ-पुत्रस्य—ज्येष्ठ पुत्र; यदोः—यदु का; वंशः—वंश; अनु-कीर्तितः—महिमा-गायन किया गया है।

श्रीमद्भागवत में वर्णन हुआ है कि किस तरह भृगुवंशियों में सबसे महान् भगवान् परशुराम ने पृथ्वी से सारे क्षत्रियों का संहार किया। इसमें उन यशस्वी राजाओं के जीवनो का वर्णन हुआ है, जो चन्द्रवंश में प्रकट हुए—यथा ऐल, ययाति, नहुष, दुष्मन्त पुत्र भरत, शान्तनु तथा शान्तनु पुत्र भीष्म जैसे राजा। इसके साथ ही ययाति के ज्येष्ठ पुत्र राजा यदु द्वारा स्थापित महान् वंश का भी वर्णन हुआ है।

यत्रावतीर्णो भगवान् कृष्णाख्यो जगदीश्वरः ।

वसुदेवगृहे जन्म ततो वृद्धिश्च गोकुले ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

यत्र—जिस वंश में; अवतीर्णः—अवतरित हुए; भगवान्—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान्; कृष्ण-आख्यः—कृष्ण नामक; जगत्-ईश्वरः—ब्रह्माण्ड के स्वामी; वसुदेव-गृहे—वसुदेव के घर में; जन्म—जन्म; ततः—तत्पश्चात्; वृद्धिः—बड़ा होना; च—तथा; गोकुले—गोकुल में।

जिस तरह ब्रह्माण्ड के स्वामी भगवान् श्रीकृष्ण यदुवंश में अवतरित हुए, जिस तरह उन्होंने वसुदेव के घर में जन्म लिया और जिस तरह वे गोकुल में बड़े हुए—इन सबका इसमें विस्तार से वर्णन हुआ है।

तस्य कर्माण्यपाराणि कीर्तितान्यसुरद्विषः ।  
 पूतनासुपयःपानं शकटोच्चाटनं शिशोः ॥ २८ ॥  
 तृणावर्तस्य निष्पेषस्तथैव बकवत्सयोः ।  
 अघासुरवधो धात्रा वत्सपालावगूहनम् ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उसके; कर्माणी—कार्यकलाप; अपाराणि—असंख्य; कीर्तितानि—स्तुति किये जाते हैं; असुर-द्विषः—असुरों के शत्रु; पूतना—पूतना के; असु—प्राण; पयः—दूध के; पानम्—पीना; शकत—गाड़ी का; उच्चाटनम्—भंजन; शिशोः—शिशु द्वारा; तृणावर्तस्य—तृणावर्त का; निष्पेषः—दलन; तथा—और; एव—निस्सन्देह; बक-वत्सयोः—बक तथा वत्स नामक असुरों के; अघ-असुर—अघ नामक असुर का; वधः—वध; धात्रा—ब्रह्मा द्वारा; वत्स-पाल—बछड़े तथा ग्वालबालों का; अवगूहनम्—छिपाया जाना।

इसमें असुरों के शत्रु श्रीकृष्ण की असंख्य लीलाओं का, जिनमें पूतना के स्तनों से दुग्ध के साथ प्राण को चूस लेने, शकट भंजन, तृणावर्त दलन, बकासुर-वध, वत्सासुर तथा अघासुर के वध की बाल-लीलाएँ और ब्रह्मा द्वारा उनके बछड़ों तथा ग्वालबाल मित्रों का गुफा में छिपाये जाने के समय की गई लीलाओं का महिमा-गायन है।

धेनुकस्य सहभ्रातुः प्रलम्बस्य च सङ्क्षयः ।  
 गोपानां च परित्राणं दावाग्नेः परिसर्पतः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

धेनुकस्य—धेनुक का; सह-भ्रातुः—साथियों समेत; प्रलम्बस्य—प्रलम्ब का; च—तथा; सङ्क्षयः—विनाश; गोपानाम्—ग्वालबालों की; च—तथा; परित्राणम्—रक्षा; दाव-अग्नेः—जंगल की आग से; परिसर्पतः—घेरे हुई।

श्रीमद्भागवत में बताया गया है कि किस तरह भगवान् कृष्ण तथा बलराम ने धेनुकासुर तथा उसके साथियों को मारा, किस तरह बलराम ने प्रलम्बासुर का विनाश किया और किस तरह कृष्ण ने दावाग्नि से घेरे ग्वालबालों को बचाया।

दमनं कालियस्याहेर्महाहेर्नन्दमोक्षणम् ।  
 व्रतचर्या तु कन्यानां यत्र तुष्टोऽच्युतो व्रतैः ॥ ३१ ॥  
 प्रसादो यज्ञपत्नीभ्यो विप्राणां चानुतापनम् ।  
 गोवर्धनोद्धारणं च शक्रस्य सुरभेरथ ॥ ३२ ॥  
 यज्ञभिषेकः कृष्णस्य स्त्रीभिः क्रीडा च रात्रिषु ।  
 शङ्खचूडस्य दुर्बुद्धेर्वधोऽरिष्टस्य केशिनः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

दमनम्—दमन; कालियस्य—कालिय का; अहेः—सर्प; महा-अहेः—विशाल सर्प से; नन्द-मोक्षणम्—महाराज नन्द को छुड़ाना; व्रत-चर्या—व्रत रखना; तु—तथा; कन्यानाम्—गोपियों का; यत्र—जिससे; तुष्टः—तुष्ट हुए; अच्युतः—भगवान् कृष्ण; व्रतैः—उनके व्रतों से; प्रसादः—कृपा; यज्ञ-पत्नीभ्यः—वैदिक यज्ञ करने वाले ब्राह्मण पत्नियों को; विप्राणाम्—ब्राह्मण पतियों का; च—तथा; अनुतापनम्—पश्चात्ताप; गोवर्धन-उद्धारणम्—गोवर्धन पर्वत का उठाया जाना; च—तथा;

शक्रस्य—इन्द्र द्वारा; सुरभे:—सुरभि गाय के साथ; अथ—तब; यज्ञ-अभिषेक:—पूजा तथा अनुष्ठानिक स्नान कराना; कृष्णस्य—भगवान् कृष्ण का; स्त्रीभि:—स्त्रियों के साथ; क्रीडा—खेलकूद; च—तथा; रात्रिषु—रातों में; शङ्खचूडस्य—शंखचूड़ असुर का; दुर्बुद्धे:—मूर्ख; वध:—मारा जाना; अरिष्टस्य—अरिष्ट का; केशिन:—केशी का।

कालिय नाग का दमन, नन्द महाराज का विशाल सर्प से बचाया जाना, तरुण गोपियों द्वारा कठिन व्रत किया जाना और इस तरह कृष्ण का तुष्ट होना, उन वैदिक ब्राह्मणों की पश्चाताप कर रही पत्नियों के प्रति कृपा-प्रदर्शन, गोवर्धन पर्वत के उठाये जाने के बाद इन्द्र तथा सुरभि गाय द्वारा पूजा तथा अभिषेक किया जाना, गोपियों के साथ कृष्ण की रात्रिकालीन लीलाएँ तथा शंखचूड़, अरिष्ट एवं केशी जैसे मूर्ख असुरों का वध—ये सारी लीलाएँ इसमें विस्तार से वर्णित हैं।

अक्रूरागमनं पश्चात्प्रस्थानं रामकृष्णयोः ।

व्रजस्त्रीणां विलापश्च मथुरालोकनं ततः ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

अक्रूर—अक्रूर का; आगमनम्—आना; पश्चात्—उसके बाद; प्रस्थानम्—प्रस्थान; राम-कृष्णयोः—बलराम तथा कृष्ण का; व्रज-स्त्रीणाम्—वृन्दावन की स्त्रियों का; विलापः—शोक; च—तथा; मथुरा-आलोकनम्—मथुरा का देखना; ततः—तब।

भागवत में अक्रूर के आने, तत्पश्चात् कृष्ण तथा बलराम का जाना, गोपियों का विलाप और मथुरा भ्रमण का वर्णन मिलता है।

गजमुष्टिकचाणूरकंसादीनां तथा वधः ।

मृतस्थानयनं सूनोः पुनः सान्दीपनेगुरोः ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

गज—कुवलयापीड़ नामक हाथी का; मुष्टिक-चाणूर—मुष्टिक तथा चाणूर नामक मल्लों का; कंस—कंस का; आदीनाम्—तथा अन्यो का; तथा—भी; वधः—मारा जाना; मृतस्थ—मरे हुए; आनयनम्—वापस लाया जाना; सूनोः—पुत्र का; पुनः—फिर से; सान्दीपनेः—सान्दीपनि के; गुरोः—अपने गुरु।

इसमें इसका भी वर्णन हुआ है कि किस तरह कृष्ण तथा बलराम ने कुवलयापीड़ हाथी, मुष्टिक तथा चाणूर मल्लों एवं कंस आदि असुरों का वध किया और किस तरह कृष्ण अपने गुरु सान्दीपनि मुनि के मृत पुत्र को वापस ले आये।

मथुरायां निवसता यदुचक्रस्य यत्प्रियम् ।

कृतमुद्भवरामाभ्यां युतेन हरिणा द्विजाः ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

मथुरायाम्—मथुरा में; निवसता—रहते हुए; यदु-चक्रस्य—यदुवंशियों के हेतु; यत्—जो; प्रियम्—तृप्तिकारक; कृतम्—किया गया; उद्भव-रामाभ्याम्—उद्भव तथा बलराम के साथ; युतेन—युक्त; हरिणा—हरि द्वारा; द्विजाः—हे ब्राह्मणो।

तत्पश्चात् हे ब्राह्मणो, इस शास्त्र में बतलाया गया है कि किस तरह उद्भव और बलराम

के साथ मथुरा में निवास करते हुए भगवान् हरि ने यदुवंश की तुष्टि के लिए लीलाएँ कीं।

जरासन्धसमानीतसैन्यस्य बहुशो वधः ।

घातनं यवनेन्द्रस्य कुशस्थल्या निवेशनम् ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ

जरासन्ध—जरासन्ध द्वारा; समानीत—एकत्र की गई; सैन्यस्य—सेना का; बहुशः—अनेक बार; वधः—विनाश;  
घातनम्—वध; यवन-इन्द्रस्य—बर्बरों के राजाओं का; कुशस्थल्याः—द्वारका की; निवेशनम्—स्थापना।

इसके साथ ही जरासन्ध द्वारा लाई गई अनेक सेनाओं का संहार, बर्बर राजा कालयवन का वध तथा द्वारकापुरी की स्थापना का भी वर्णन हुआ है।

आदानं पारिजातस्य सुधर्मायाः सुरालयात् ।

रुक्मिण्या हरणं युद्धे प्रमथ्य द्विषतो हरेः ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ

आदानम्—प्राप्त करना; पारिजातस्य—पारिजात वृक्ष का; सुधर्मायाः—सुधर्मा सभाभवन का; सुर-आलयात्—देवताओं के धाम से; रुक्मिण्याः—रुक्मिणी का; हरणम्—हरण; युद्धे—युद्ध में; प्रमथ्य—हराकर; द्विषतः—अपने प्रतिद्वन्द्वियों को; हरेः—भगवान् हरि द्वारा।

इस कृति में इसका भी वर्णन है कि भगवान् कृष्ण किस तरह स्वर्ग से पारिजात वृक्ष तथा सुधर्मा सभाभवन लाये और उन्होंने किस तरह युद्ध में अपने प्रतिद्वन्द्वियों को हराकर रुक्मिणी का हरण किया।

हरस्य जृम्भणं युद्धे बाणस्य भुजकृन्तनम् ।

प्राग्ज्योतिषपतिं हत्वा कन्यानां हरणं च यत् ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ

हरस्य—शिवजी का; जृम्भणम्—जबरन जँभाई लाकर; युद्धे—युद्ध में; बाणस्य—बाण की; भुज—भुजाओं का;  
कृन्तनम्—काटा जाना; प्राग्ज्योतिष-पतिम्—प्राग्ज्योतिषपुर के स्वामी को; हत्वा—मार कर; कन्यानाम्—कुमारियों का;  
हरणम्—हरण करना; च—तथा; यत्—जिससे।

इसमें इसका भी वर्णन हुआ है कि कृष्ण ने किस तरह बाणासुर के साथ युद्ध में, शिव को जँभाई दिलाकर परास्त किया, किस तरह उन्होंने बाणासुर की भुजाएँ काटीं और किस तरह प्राग्ज्योतिषपुर के स्वामी को मारा तथा उसके बाद उस नगरी में बन्दी की गई कुमारियों को छोड़ा।

चैद्यपौण्ड्रकशाल्वानां दन्तवक्रस्य दुर्मतेः ।

शम्बरो द्विविदः पीठो मुरः पञ्चजनादयः ॥ ४० ॥

माहात्म्यं च वधस्तेषां वाराणस्याश्च दाहनम् ।

भारावतरणं भूमेर्निमित्तीकृत्य पाण्डवान् ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

चैद्य—चेदि राजा शिशुपाल का; पौण्ड्रक—पौण्ड्रक का; शाल्वानाम्—तथा शाल्व का; दन्तवक्रस्य—दन्तवक्र का; दुर्मतेः—मूर्ख; शम्बरः द्विविदः पीठः—शम्बर, द्विविद तथा पीठ नामक असुरों; मुरः पञ्चजन-आदयः—मुर, पञ्चजन तथा अन्यो; माहात्म्यम्—पराक्रम; च—तथा; वधः—मृत्यु; तेषाम्—उनकी; वाराणस्याः—वाराणसी ( बनारस ) नामक पवित्र नगरी का; च—तथा; दाहनम्—जलाया जाना; भार—भार का; अवतरणम्—उतारा जाना या कमी लाना; भूमेः—पृथ्वी का; निमित्ती-कृत्य—कारण बनाकर; पाण्डवान्—पाण्डु-पुत्रों को ।

भागवत में चेदिराज, पौण्ड्रक, शाल्व, मूर्ख दन्तवक्र, शम्बर, द्विविद, पीठ, मुर, पञ्चजन तथा अन्य असुरों के पराक्रमों तथा मृत्युओं के वर्णन के साथ-साथ बनारस के जलाये जाने का वर्णन है। इसमें यह भी बताया गया है कि किस तरह कृष्ण ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में पाण्डवों को लगाकर पृथ्वी के भार को कम किया।

विप्रशापापदेशेन संहारः स्वकुलस्य च ।

उद्धवस्य च संवादो वसुदेवस्य चाद्भुतः ॥ ४२ ॥

यत्रात्मविद्या ह्यखिला प्रोक्ता धर्मविनिर्णयः ।

ततो मर्त्यपरित्याग आत्मयोगानुभावतः ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

विप्र-शाप—ब्राह्मण के शाप के; अपदेशेन—बहाने; संहारः—मारा जाना; स्व-कुलस्य—अपने ही परिवार का; च—तथा; उद्धवस्य—उद्धव के साथ; च—तथा; संवादः—बातचीत; वसुदेवस्य—( नारद के साथ ) वासुदेव की; च—तथा; अद्भुतः—अद्भुत; यत्र—जिसमें; आत्म-विद्या—आत्मा का विज्ञान; हि—निस्सन्देह; अखिला—पूर्णरूपेण; प्रोक्ता—कहा गया; धर्म-विनिर्णयः—धर्म का सुनिश्चित किया जाना; ततः—तब; मर्त्य—मर्त्य जगत का; परित्यागः—त्याग; आत्म-योग—अपनी योगशक्ति के; अनुभावतः—बल पर।

भगवान् द्वारा ब्राह्मण शाप के बहाने अपने वंश की समाप्ति, नारद के साथ वसुदेव का संवाद, उद्धव तथा कृष्ण के बीच असाधारण बातचीत जो आत्म-विज्ञान को विस्तार से प्रकट करने वाली है और मानव समाज के धर्म की व्याख्या करती है और फिर भगवान् कृष्ण द्वारा अपने योग-बल से इस मर्त्यलोक का परित्याग करना—इन सारी घटनाओं का भागवत में वर्णन हुआ है।

युगलक्षणवृत्तिश्च कलौ नृणामुपप्लवः ।

चतुर्विधश्च प्रलय उत्पत्तिस्त्रिविधा तथा ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ

युग—विभिन्न युगों के; लक्षण—लक्षण; वृत्तिः—तथा संगत कार्य; च—भी; कलौ—वर्तमान कलियुग में; नृणाम्—मनुष्यों के; उपप्लवः—पूर्ण उत्पात; चतुः-विधः—चार प्रकार की; च—तथा; प्रलयः—प्रलय की विधि; उत्पत्तिः—सृष्टि; त्रि-विधा—तीन प्रकार की; तथा—और।

इस कृति में विभिन्न युगों में लोगों के लक्षण तथा आचरण, कलियुग में मनुष्यों द्वारा अनुभव की जाने वाली अव्यवस्था, चार प्रकार के प्रलय तथा तीन प्रकार की सृष्टि का भी

वर्णन हुआ है।

देहत्यागश्च राजर्षेर्विष्णुरातस्य धीमतः ।

शाखाप्रणयनमृषेर्माकण्डेयस्य सत्कथा ।

महापुरुषविन्यासः सूर्यस्य जगदात्मनः ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ

देह-त्यागः—शरीर का छोड़ना; च—तथा; राज-ऋषेः—सन्त साधु स्वभाव वाले राजा द्वारा; विष्णु-रातस्य—परीक्षित का; धी-मतः—बुद्धिमान; शाखा—वेदों की शाखाओं का; प्रणयनम्—प्रसार; ऋषेः—ऋषि व्यासदेव से; मार्कण्डेयस्य—मार्कण्डेय ऋषि की; सत्-कथा—शुभ कथा; महा-पुरुष—भगवान् के विश्व रूप का; विन्यासः—विस्तृत व्यवस्था; सूर्यस्य—सूर्य की; जगत्-आत्मनः—ब्रह्माण्ड की आत्मा स्वरूप।

इसमें बुद्धिमान तथा साधु स्वभाव वाले राजा विष्णुरात ( परीक्षित ) के निधन का, श्रील व्यासदेव द्वारा वेदों की शाखाओं के प्रसार की व्याख्या का, मार्कण्डेय ऋषि विषयक शुभ कथा का तथा भगवान् के विश्व रूप एवं ब्रह्माण्ड की आत्मा सूर्य के रूप में उनके रूप की विस्तृत व्याख्या का भी विवरण है।

इति चोक्तं द्विजश्रेष्ठा यत्पृष्टोऽहमिहास्मि वः ।

लीलावतारकर्माणि कीर्तितानीह सर्वशः ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार; च—और; उक्तम्—कहा गया; द्विज-श्रेष्ठाः—हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ; यत्—जो; पृष्टः—पूछा गया; अहम्—मैं; इह—यहाँ; अस्मि—हूँ; वः—तुम्हारे द्वारा; लीला-अवतार—अपने ही आनन्द के लिए भगवान् के दैवी अवतरण; कर्माणि—कार्य; कीर्तितानि—स्तुति किये गये; इह—इस शास्त्र में; सर्वशः—पूरी तरह से।

इस प्रकार हे ब्राह्मण-श्रेष्ठो, यहाँ पर तुम लोगों ने जो कुछ मुझसे पूछा था, वह सब मैंने बतला दिया। इस ग्रंथ में भगवान् के लीला अवतारों के कार्यकलापों का विस्तार से गुणगान हुआ है।

पतितः स्वलितश्चार्तः क्षुत्त्वा वा विवशो गृणन् ।

हरये नम इत्युच्चैर्मुच्यते सर्वपातकात् ॥ ४७ ॥

शब्दार्थ

पतितः—गिरते हुए; स्वलितः—लड़खड़ाते; च—तथा; आर्तः—पीड़ा का अनुभव करते हुए; क्षुत्त्वा—छींकते हुए; वा—अथवा; विवशः—विवश होकर; गृणन्—कीर्तन करते हुए; हरये नमः—हरि को नमस्कार; इति—इस प्रकार; उच्चैः—जोर-जोर से; मुच्यते—मुक्त हो जाता है; सर्व-पातकात्—सभी पापों से।

यदि गिरते, लड़खड़ाते, पीड़ा अनुभव करते या छींकते समय कोई विवशता से भी उच्च स्वर से “भगवान् हरि की जय हो” चिल्लाता है, तो वह स्वतः सारे पापों से मुक्त हो जाता है।

तात्पर्य : श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर बतलाते हैं कि श्री चैतन्य महाप्रभु सदैव ही

श्रीवास ठाकुर के आँगन में हरये नमः कृष्ण-गीत का जोर-जोर से उच्चारण करते थे। यही श्री चैतन्य हमें हमारी भौतिकतावादी भोगलिप्सा से मुक्त करायेंगे यदि हम भी भगवान् हरि की महिमा का उच्च स्वर से कीर्तन करें।

सङ्कीर्त्यमानो भगवाननन्तः

श्रुतानुभावो व्यसनं हि पुंसाम् ।

प्रविश्य चित्तं विधुनोत्यशेषं

यथा तमोऽर्कोऽभ्रमिवातिवातः ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ

सङ्कीर्त्यमानः—ठीक से कीर्तन किये जाने पर; भगवान्—भगवान्; अनन्तः—असीम; श्रुत—सुना जाकर; अनुभावः—उनकी शक्ति; व्यसनम्—कष्ट; हि—निस्सन्देह; पुंसाम्—मनुष्यों के; प्रविश्य—प्रवेश करके; चित्तम्—हृदय में; विधुनोति—स्वच्छ कर देता है; अशेषम्—पूरी तरह से; यथा—जिस तरह; तमः—अंधकार; अर्कः—सूर्य; अभ्रम्—बादलों को; इव—सदृश; अति-वातः—प्रबल वायु।

जब लोग ठीक से भगवान् की महिमा का गायन करते हैं या उनकी शक्तियों के विषय में श्रवण करते हैं, तो भगवान् स्वयं उनके हृदयों में प्रवेश करते हैं और सारे दुर्भाग्य को उसी तरह दूर कर देते हैं जिस तरह सूर्य अंधेरे को दूर करता है या कि प्रबल वायु बादलों को उड़ा ले जाती है।

तात्पर्य : हो सकता है कि कोई व्यक्ति सूर्य द्वारा अंधकार हटाये जाने के दृष्टान्त से तुष्ट न हो क्योंकि कभी-कभी सूर्य गुफा के अंधकार को नहीं हटा पाता। इसलिए प्रबल वायु का दृष्टान्त दिया गया है, जो बादलों के आवरण को उड़ा ले जाती है। इस तरह यह बलपूर्वक कहा गया है कि भगवान् अपने भक्त के हृदय से भौतिक मोह के अंधकार को हटा देंगे।

मृषा गिरस्ता ह्यसतीरसत्कथा

न कथ्यते यद्भगवानधोक्षजः ।

तदेव सत्यं तदु हैव मङ्गलं

तदेव पुण्यं भगवद्गुणोदयम् ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ

मृषाः—झूठे; गिरः—शब्द; ताः—वे; हि—निस्सन्देह; असतीः—असत्य; असत्-कथाः—जो नित्य नहीं है उसकी व्यर्थ चर्चा; न कथ्यते—नहीं कही जाती; यत्—जिसमें; भगवान्—भगवान्; अधोक्षजः—दिव्य प्रभु; तत्—वह; एव—एकमात्र; सत्यम्—सत्य; तत्—वह; उ ह—निस्सन्देह; एव—एकमात्र; मङ्गलम्—शुभ; तत्—वह; एव—एकमात्र; पुण्यम्—पवित्र; भगवत्-गुण—भगवान् के गुणों को; उदयम्—प्रकट करने वाला।

जो शब्द दिव्य भगवान् का वर्णन नहीं करते अपितु क्षणिक व्यापारों की चर्चा चलाते हैं, वे निरे झूठे तथा व्यर्थ होते हैं। केवल वे शब्द जो भगवान् के दिव्य गुणों को प्रकट करते हैं, वास्तव में, सत्य, शुभ तथा पवित्र हैं।

तात्पर्य : सारा भौतिक साहित्य तथा विचारविमर्श, आज नहीं तो कल, समय की कसौटी पर

असफल हो जायेगा। दूसरी ओर, भगवान् का दिव्य वर्णन हमें मोह के बन्धन से छुड़ाकर हमारे नित्य पद को प्राप्त करा सकता है, जोकि भगवान् के प्रेमी दास के रूप में होता है। यद्यपि पशुवत् व्यक्तिपरब्रह्म के महिमा-गान की आलोचना कर सकते हैं, किन्तु जो सभ्य हैं उन्हें चाहिए कि भगवान् की दिव्य महिमा का तेजी से प्रचार करें।

तदेव रम्यं रुचिरं नवं नवं  
तदेव शश्वन्मनसो महोत्सवम् ।  
तदेव शोकार्णवशोषणं नृणां  
यदुत्तमःश्लोकयशोऽनुगीयते ॥ ५० ॥

शब्दार्थ

तत्—वह; एव—निस्सन्देह; रम्यम्—आकर्षक; रुचिरम्—अच्छा लगने वाला; नवम् नवम्—नया से नया; तत्—वह; एव—निस्सन्देह; शश्वत्—निरन्तर; मनसः—मन से; महा-उत्सवम्—महान् उत्सव; तत्—वह; एव—निस्सन्देह; शोक-अर्णव—दुख का सागर; शोषणम्—सुखाने वाला; नृणाम्—मनुष्यों के लिए; यत्—जिसमें; उत्तमःश्लोक—सर्व-प्रसिद्ध भगवान् का; यशः—यश; अनुगीयते—गाया जाता है।

सर्व-प्रसिद्ध भगवान् के यश का वर्णन करने वाले वे शब्द आकर्षक, आस्वाद्य तथा सदैव नवीन रहते हैं। निस्सन्देह, ऐसे शब्द मन के लिए शाश्वत उत्सव हैं और वे कष्ट के सागर को सुखाने वाले हैं।

न यद्वचश्चित्रपदं हरेर्यशो  
जगत्पवित्रं प्रगृणीत कर्हिचित् ।  
तद्ध्वाङ्क्षतीऋथं न तु हंससेवितं  
यत्राच्युतस्तत्र हि साधवोऽमलाः ॥ ५१ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; यत्—जो; वचः—वाणी; चित्र-पदम्—अलंकृत शब्द; हरेः—भगवान् के; यशः—यश; जगत्—ब्रह्माण्ड; पवित्रम्—पवित्र करने वाली; प्रगृणीत—वर्णन करते हैं; कर्हिचित्—सदैव; तत्—वह; ध्वाङ्क्ष—कौवों के; तीर्थम्—तीर्थस्थान; न—नहीं; तु—दूसरी ओर; हंस—ज्ञानी सन्त पुरुषों द्वारा; सेवितम्—सेवित; यत्र—जिसमें; अच्युतः—भगवान् अच्युत ( का वर्णन रहता है ); तत्र—वहाँ; हि—एकमात्र; साधवः—साधुजन; अमलाः—शुद्ध।

जो शब्द उन भगवान् के यश का वर्णन नहीं करते जो सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के वातावरण को पवित्र करने वाले हैं, वे कौवों के तीर्थस्थान के समान हैं तथा ज्ञानी मनुष्य कभी भी उनका सहारा नहीं लेते। शुद्ध तथा साधु स्वभाव वाले भक्तगण केवल अच्युत भगवान् के यश को वर्णनकरने वाली कथाओं में रुचि लेते हैं।

तद्वाग्विसर्गो जनताघसम्प्लवो  
यस्मिन्प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि ।  
नामान्यनन्तस्य यशोऽङ्कितानि य-

च्छृण्वन्ति गायन्ति गृणन्ति साधवः ॥ ५२ ॥

शब्दार्थ

तत्—वह; वाक्—वाणी; विसर्गः—सृष्टि; जनता—सामान्य लोगों के; अघ—पापों के; सम्प्लवः—विप्लव; यस्मिन्—जिसमें; प्रति-श्लोकम्—हर श्लोक; अबद्धवति—अनियमित ढंग से रचा जाता है; अपि—यद्यपि; नामानि—दिव्य नाम; अनन्तस्य—अनन्त भगवान् के; यशः—यश; अङ्कितानि—अंकित; यत्—जो; शृण्वन्ति—सुनते हैं; गायन्ति—गाते हैं; गृणन्ति—स्वीकार करते हैं; साधवः—ईमानदार शुद्ध पुरुष।

दूसरी ओर, जो साहित्य अनन्त भगवान् के नाम, यश, रूप लीला आदि की दिव्य महिमा के वर्णनों से पूर्ण होता है, वह एक सर्वथा भिन्न सृष्टि है, जो इस संसार की गुमराह सभ्यता के अपवित्र जीवन में क्रान्ति लाने वाले दिव्य शब्दों से पूर्ण होती है। ऐसे ग्रंथ भले ही ठीकसे रचे हुए न हों, किन्तु उन शुद्ध पुरुषों द्वारा जो पूरी तरह से ईमानदार हैं, सुने, गाये और स्वीकार किये जाते हैं।

नैष्कर्म्यमप्यच्युतभाववर्जितं

न शोभते ज्ञानमलं निरञ्जनम् ।

कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे

न ह्यर्पितं कर्म यदप्यनुत्तमम् ॥ ५३ ॥

शब्दार्थ

नैष्कर्म्यम्—सकाम कर्म के फलों से मुक्त रहना, आत्म-साक्षात्कार; अपि—यद्यपि; अच्युत—अच्युत भगवान् की; भाव—धारणा; वर्जितम्—से विहीन; न—नहीं; शोभते—शोभा देता; ज्ञानम्—दिव्य ज्ञान; अलम्—वस्तुतः; निरञ्जनम्—उपाधियों से रहित; कुतः—कहाँ है; पुनः—फिर; शश्वत्—सदैव; अभद्रम्—अशोभनीय; ईश्वरे—ईश्वर के प्रति; न—नहीं; हि—निस्सन्देह; अर्पितम्—अर्पित; कर्म—सकाम कर्म; यत्—जो; अपि—भी; अनुत्तमम्—बेजोड़।

आत्म-साक्षात्कार का ज्ञान समस्त भौतिक आसक्ति से मुक्त होते हुए भी ठीक से काम नहीं करता यदि वह अच्युत ( ईश्वर ) के भाव से विहीन हो। तब अच्छे से अच्छे सम्पन्न कर्म जो प्रारम्भ से पीड़ादायक तथा क्षणिक स्वभाव के होते हैं, किस काम के हो सकते हैं यदि उनका उपयोग भगवान् की भक्ति के लिए नहीं किया जाता ?

तात्पर्य : यह श्लोक तथा पिछले दो श्लोक किंचित परिवर्तन के साथ श्रीमद्भागवत के प्रथम स्कन्ध ( १.५.१०-१२ ) में प्राप्य हैं। इनके श्रील प्रभुपाद की टीका पर आधारित हैं।

यशःश्रियामेव परिश्रमः परो

वर्णाश्रमाचारतपःश्रुतादिषु ।

अविस्मृतिः श्रीधरपादपद्मयो-

गुणानुवादश्रवणादरादिभिः ॥ ५४ ॥

शब्दार्थ

यशः—यश; श्रियाम्—तथा ऐश्वर्य में; एव—एकमात्र; परिश्रमः—श्रम; परः—महान्; वर्ण-आश्रम-आचार—वर्णाश्रम प्रणाली में अपने कार्यों को सम्पन्न करके; तपः—तपस्या; श्रुत—पवित्र शास्त्रों का सुनना; आदिषु—इत्यादि में;

अविस्मृतिः—स्मृति; श्रीधर—श्री को धारण करने वाले के; पाद-पद्मयोः—चरणकमलों के; गुण-अनुवाद—गुणों के कीर्तन का; श्रवण—सुनने से; आदर—आदर; आदिभिः—इत्यादि से।

वर्णाश्रम प्रणाली में सामान्य सामाजिक तथा धार्मिक कर्तव्यों को निबाहने में, तपस्या करने में तथा वेदों को श्रवण करने में जो महान् श्रम करना पड़ता है, उससे संसारी यश तथा ऐश्वर्य की ही उपलब्धि हो पाती है। किन्तु भगवान् लक्ष्मीपति के दिव्य गुणों का आदर करने तथा ध्यानपूर्वक उनका पाठ सुनने से मनुष्य उनके चरणकमलों का स्मरण कर सकता है।

अविस्मृतिः कृष्णपदारविन्दयोः

क्षिणोत्यभद्राणि च शं तनोति ।

सत्त्वस्य शुद्धिं परमात्मभक्तिं

ज्ञानं च विज्ञानविरागयुक्तम् ॥ ५५ ॥

शब्दार्थ

अविस्मृतिः—स्मृति; कृष्ण-पद-अरविन्दयोः—भगवान् कृष्ण के चरणकमलों की; क्षिणोति—नष्ट करती है; अभद्राणि—अशुभ वस्तुओं को; च—तथा; शम्—सौभाग्य; तनोति—विस्तार करती है; सत्त्वस्य—हृदय का; शुद्धिम्—शुद्धि; परम-आत्म—परमात्मा के लिए; भक्तिम्—भक्ति; ज्ञानम्—ज्ञान; च—तथा; विज्ञान—प्रत्यक्ष अनुभूति; विराग—तथा वैराग्य; युक्तम्—से युक्त।

भगवान् कृष्ण के चरणकमलों की स्मृति प्रत्येक अशुभ वस्तु को नष्ट करती है और परम सौभाग्य प्रदान करती है। यह हृदय को स्वच्छ बनाती है और परमात्मा की भक्ति के साथ साथ अनुभूति तथा त्याग से युक्त ज्ञान प्रदान करती है।

यूयं द्विजाख्या बत भूरिभागा

यच्छश्रदात्मन्यखिलात्मभूतम् ।

नारायणं देवमदेवमीश-

मजस्रभावा भजताविवेश्य ॥ ५६ ॥

शब्दार्थ

यूयम्—तुम सभी; द्विज-अख्याः—हे ब्राह्मणों में परम विख्यात; बत—निस्सन्देह; भूरि-भागाः—अत्यन्त भाग्यशाली; यत्—क्योंकि; शश्रत्—निरन्तर; आत्मनि—अपने हृदयों में; अखिल—समस्त; आत्म-भूतम्—जो परम आत्मा है; नारायणम्—भगवान् नारायण को; देवम्—भगवान् को; अदेवम्—जिनसे बढ़कर कोई देव नहीं है; ईशम्—परम नियन्ता; अजस्र—बिना व्यवधान के; भावाः—प्रेमपूर्ण; भजत—तुम लोग पूजा करो; आविवेश्य—रख कर।

हे सुप्रसिद्ध ब्राह्मणो, तुम लोग सचमुच अत्यन्त भाग्यशाली हो क्योंकि तुम लोगों ने पहले ही अपने हृदयों में भगवान् श्री नारायण को—परम नियन्ता तथा सारे जगत के परम आत्मा भगवान् को—धारण कर रखा है जिनसे बढ़ कर कोई अन्य देव नहीं है। तुम लोगों में उनके लिए अविचल प्रेम है, अतएव मैं तुम लोगों से उनकी पूजा करने के लिए अनुरोध करता हूँ।

अहं च संस्मारित आत्मतत्त्वं  
श्रुतं पुरा मे परमर्षिवक्त्रात् ।  
प्रायोपवेशे नृपतेः परीक्षितः  
सदस्यृषीणां महतां च शृण्वताम् ॥ ५७ ॥

शब्दार्थ

अहम्—मैं; च—भी; संस्मारितः—स्मरण कराया गया हूँ; आत्म-तत्त्वम्—परमात्मा का विज्ञान; श्रुतम्—सुना हुआ;  
पुरा—पहले; मे—मेरे द्वारा; परम-ऋषि—ऋषियों में सर्वश्रेष्ठ, शुकदेव के; वक्त्रात्—मुख से; प्राय-उपवेशे—मृत्युपर्यन्त  
उपवास के समय; नृपतेः—राजा के; परीक्षितः—परीक्षित; सदसि—सभा में; ऋषीणाम्—ऋषियों के; महताम्—महान्;  
च—तथा; शृण्वताम्—उनके सुनते हुए।

अब मुझे उस ईश्वर-विज्ञान का पूरी तरह स्मरण हो आया है, जिसे मैंने पहले महर्षि शुकदेव गोस्वामी के मुख से सुना था। मैं महर्षियों की उस सभा में उपस्थित था जिन्होंने मृत्युपर्यन्त उपवास पर बैठे राजा परीक्षित से कहते उन्हें सुना था।

एतद्गः कथितं विप्राः कथनीयोरुर्मणः ।  
माहात्म्यं वासुदेवस्य सर्वाशुभविनाशनम् ॥ ५८ ॥

शब्दार्थ

एतद्—यह; वः—तुम लोगों से; कथितम्—सुनाया; विप्राः—हे ब्राह्मणो; कथनीय—उसका, जो वर्णन करने योग्य है;  
ऊरु-कर्मणः—तथा जिसके कार्य अत्यन्त महान् हैं; माहात्म्यम्—यश; वासुदेवस्य—वासुदेव का; सर्व-अशुभ—समस्त  
अशुभ को; विनाशनम्—नष्ट कर देने वाला।

हे ब्राह्मणो, इस तरह मैंने तुम लोगों से भगवान् वासुदेव की महिमा का वर्णन किया जिनके असामान्य कार्य स्तुति के योग्य हैं। यह वर्णन अशुभ का विनाश करने वाला है।

य एतश्चावयेन्नित्यं यामक्षणमनन्यधीः ।  
श्लोकमेकं तदर्थं वा पादं पादार्धमेव वा ।  
श्रद्धावान्योऽनुशृणुयात्पुनात्यात्मानमेव सः ॥ ५९ ॥

शब्दार्थ

यः—जो; एतद्—यह; श्रावयेत्—अन्यों को सुनाता है; नित्यम्—सदैव; याम-क्षणम्—हर घण्टे तथा हर मिनट; अनन्य-  
धीः—अविचल ध्यान से; श्लोकम्—श्लोक; एकम्—एक; तत्-अर्धम्—उसका आधा; वा—अथवा; पादम्—एक भी  
पंक्ति; पाद-अर्धम्—आधी पंक्ति; एव—निस्सन्देह; वा—अथवा; श्रद्धा-वान्—श्रद्धापूर्वक; यः—जो; अनुशृणुयात्—  
उचित स्रोत से सुनता है; पुनाति—पवित्र बनाता है; आत्मानम्—स्वयं को; एव—निस्सन्देह; सः—वह।

जो व्यक्ति अविचल ध्यान से इस ग्रंथ को प्रत्येक घण्टे के प्रत्येक क्षण निरन्तर सुनाता है तथा जो व्यक्ति एक अथवा आधा श्लोक, अथवा एक या आधी भी पंक्ति श्रद्धा भाव से सुनता है, वह अपने को पवित्र बना लेता है।

द्वादश्यामेकादश्यां वा शृण्वन्नायुष्यवान्भवेत् ।

पठत्यनश्नन्प्रयतः पूतो भवति पातकात् ॥ ६० ॥

शब्दार्थ

द्वादश्याम्—माह की द्वादशी को; एकादश्याम्—एकादशी को; वा—अथवा; शृण्वन्—सुनते हुए; आयुष्य-वान्—दीर्घ आयु वाला; भवेत्—हो जाता है; पठति—यदि पाठ करता है; अनश्नन्—बिना भोजन किये; प्रयतः—ध्यानपूर्वक; पूतः—पवित्र; भवति—हो जाता है; पातकात्—पापों के फल से।

जो कोई इस भागवत को एकादशी या द्वादशी के दिन सुनता है उसे निश्चित रूप से दीर्घायु प्राप्त होती है और जो व्यक्ति उपवास रखते हुए इसे ध्यानपूर्वक सुनाता है, वह सारे पापों के फल से शुद्ध हो जाता है।

पुष्करे मथुरयां च द्वारवत्यां यतात्मवान् ।

उपोष्य संहितामेतां पठित्वा मुच्यते भयात् ॥ ६१ ॥

शब्दार्थ

पुष्करे—पुष्कर नामक पवित्र स्थान में; मथुरायाम्—मथुरा में; च—तथा; द्वारवत्याम्—द्वारका में; यत-आत्म-वान्—आत्मसंयमी; उपोष्य—उपवास रख कर; संहिताम्—ग्रंथ को; एताम्—इस; पठित्वा—सुनाकर, बाँच कर; मुच्यते—मुक्त हो जाता है; भयात्—भय से।

जो व्यक्ति मन को वश में रखता है, जो पुष्कर, मथुरा या द्वारका जैसे पवित्र स्थानों में उपवास रखता है और इस शास्त्र का अध्ययन करता है, वह सारे भय से मुक्त हो जाता है।

देवता मुनयः सिद्धाः पितरो मनवो नृपाः ।

यच्छन्ति कामानृणतः शृण्वतो यस्य कीर्तनात् ॥ ६२ ॥

शब्दार्थ

देवताः—देवता; मुनयः—मुनिगण; सिद्धाः—सिद्ध योगी; पितरः—पुरखे; मनवः—मनुष्य को जन्म देने वाले; नृपः—पृथ्वी के राजे; यच्छन्ति—प्रदान करते हैं; कामान्—इच्छाएँ; गृणतः—कीर्तन करने वाले को; शृण्वतः—सुनने वाले को; यस्य—जिसका; कीर्तनात्—कीर्तन करने के कारण।

जो व्यक्ति इस पुराण का कीर्तन करके अथवा इसको सुन कर इसकी स्तुति करते हैं उन्हें देवता, ऋषि, सिद्ध, पितर, मनु तथा पृथ्वी के राजा समस्त वांछित वस्तुएँ प्रदान करते हैं।

ऋचो यजूषि सामानि द्विजोऽधीत्यानुविन्दते ।

मधुकुल्या घृतकुल्याः पयःकुल्याश्च तत्फलम् ॥ ६३ ॥

शब्दार्थ

ऋचः—ऋग्वेद के; यजूषि—यजुर्वेद के; सामानि—तथा सामवेद के मंत्र; द्विजः—ब्राह्मण; अधीत्य—पढ़ कर; अनुविन्दते—प्राप्त करता है; मधु-कुल्याः—शहद की नदियाँ; घृत-कुल्याः—घी की नदियाँ; पयः-कुल्याः—दूध की नदियाँ; च—तथा; तत्—वह; फलम्—फल।

इस भागवत को पढ़ कर एक ब्राह्मण उन्हीं शहद, घी तथा दूध की नदियों को भोग

सकता है जिन्हें वह ऋग्, यजुर् तथा सामवेदों के मंत्रों का अध्ययन करके भोग सकता है।

पुराणसंहितामेतामधीत्य प्रयतो द्विजः ।

प्रोक्तं भगवता यत्तु तत्पदं परमं ब्रजेत् ॥ ६४ ॥

शब्दार्थ

पुराण-संहिताम्—सारे पुराणों के अनिवार्य संकलन को; एताम्—इस; अधीत्य—पढ़ कर; प्रयतः—ध्यानपूर्वक; द्विजः—ब्राह्मण; प्रोक्तम्—वर्णित; भगवता—भगवान् द्वारा; यत्—जो; तु—निस्सन्देह; तत्—वह; पदम्—पद; परमम्—परम; ब्रजेत्—प्राप्त करता है।

जो ब्राह्मण समस्त पुराणों के इस अनिवार्य संकलन को श्रमपूर्वक पढ़ता है, वह परम गन्तव्य को प्राप्त होता है, जिसका वर्णन स्वयं भगवान् ने इसमें किया है।

विप्रोऽधीत्याप्नुयात्प्रज्ञां राजन्योदधिमेखलाम् ।

वैश्यो निधिपतित्वं च शूद्रः शुध्येत पातकात् ॥ ६५ ॥

शब्दार्थ

विप्रः—ब्राह्मण; अधीत्य—पढ़ कर; आप्नुयात्—प्राप्त करता है; प्रज्ञाम्—भक्ति में बुद्धि; राजन्य—राजा; उदधि-मेखलाम्—समुद्रों द्वारा बँधी हुई ( पृथ्वी ); वैश्यः—व्यापारी; निधि—कोशों का; पतित्वम्—स्वामित्व; च—तथा; शूद्रः—श्रमिक; शुध्येत—शुद्ध हो जाता है; पातकात्—पापों से।

जो ब्राह्मण श्रीमद्भागवत को पढ़ता है, वह भक्ति में दृढ़ बुद्धि प्राप्त करता है। जो राजा इसका अध्ययन करता है, वह पृथ्वी पर सार्वभौम सत्ता प्राप्त करता है, वैश्य विपुल कोश पा लेता है और शूद्र पापों से छूट जाता है।

कलिमलसंहतिकालनोऽखिलेशो

हरिरितरत्र न गीयते ह्यभीक्ष्णम् ।

इह तु पुनर्भगवानशेषमूर्तिः

परिपठितोऽनुपदं कथाप्रसङ्गैः ॥ ६६ ॥

शब्दार्थ

कलि—कलह के युग का; मल-संहति—सारे कल्मष का; कालनः—संहारकर्ता; अखिल-ईशः—सारे जीवों के परम नियन्ता; हरिः—भगवान् हरि; इतरत्र—अन्यत्र; न गीयते—वर्णित नहीं होते; हि—निस्सन्देह; अभीक्ष्णम्—निरन्तर; इह—यहाँ; तु—फिर भी; पुनः—दूसरी ओर; भगवान्—भगवान्; अशेष-मूर्तिः—जो अनन्त साकार रूपों में विस्तार करता है; परिपठितः—कथा में खुल कर वर्णन किया गया है; अनु-पदम्—प्रत्येक श्लोक में; कथा-प्रसङ्गैः—कहानियों के बहाने।

सारे जीवों के परम नियन्ता भगवान् हरि कलियुग के संचित पापों का संहार करने वाले हैं, फिर भी अन्य ग्रंथों में उनकी स्तुति नहीं मिलती। किन्तु असंख्य साकार अंशों के रूप में प्रकट होने वाले ये भगवान् इस श्रीमद्भागवत की विविध कथाओं में निरन्तर तथा प्रचुर मात्रा में वर्णित हुए हैं।

तमहमजमनन्तमात्मतत्त्वं  
जगदुदयस्थितिसंयमात्मशक्तिम् ।  
द्युपतिभिरजशक्रशङ्कराद्यै-  
दुरवसितस्तवमच्युतं नतोऽस्मि ॥ ६७ ॥

शब्दार्थ

तम्—उस; अहम्—मैं; अजम्—अजन्मा; अनन्तम्—अनन्त; आत्म-तत्त्वम्—आदि परमात्मा को; जगत्—भौतिक ब्रह्माण्ड की; उदय—उत्पत्ति; स्थिति—पालन; संयम—तथा संहार; आत्म-शक्तिम्—जिनकी निजी शक्तियों से; द्यु-पतिभिः—स्वर्ग के स्वामियों द्वारा; अज-शक्र-शङ्कर-आद्यैः—ब्रह्मा, इन्द्र, शिव आदि द्वारा; दुरवसित—समझ में न आने वाले; स्तवम्—स्तुतियाँ; अच्युतम्—अच्युत भगवान् को; नतः—विनत; अस्मि—हूँ।

मैं अजन्मे तथा अनन्त परमात्मा को नमन करता हूँ जिनकी निजी शक्तियाँ ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति, पालन तथा संहार के लिए उत्तरदायी हैं। यहाँ तक कि ब्रह्मा, इन्द्र, शंकर तथा स्वर्गलोकों के अन्य स्वामी भी उस अच्युत भगवान् की महिमा की थाह नहीं पा सकते।

उपचितनवशक्तिभिः स्व आत्म-  
न्युपरचितस्थिरजङ्गमालयाय ।  
भगवत उपलब्धिमात्रधम्ने  
सुरऋषभाय नमः सनातनाय ॥ ६८ ॥

शब्दार्थ

उपचित—पूरी तरह विकसित; नव-शक्तिभिः—उनकी नौ शक्तियों ( प्रकृति, पुरुष, महत्, अहंकार तथा पाँच सूक्ष्म अनुभूति के रूप ) द्वारा; स्वे आत्मनि—अपने भीतर; उपरचित—निकट ही व्यवस्थित; स्थिर जङ्गम—चर तथा अचर दोनों प्रकार के जीवों का; आलयाय—धाम; भगवते—भगवान् को; उपलब्धि-मात्र—शुद्ध चेतना; धाम्ने—जिसकी अभिव्यक्ति; सुर—देवताओं का; ऋषभाय—प्रमुख; नमः—मेरा नमस्कार; सनातनाय—नित्य भगवान् को।

मैं उन भगवान् को नमस्कार करता हूँ जो नित्य प्रभु हैं और अन्य सारे देवों के प्रधान हैं, जिन्होंने अपनी नौ शक्तियों को विकसित करके अपने भीतर सारे चर तथा अचर प्राणियों का धाम व्यवस्थित कर रखा है और जो सदैव शुद्ध दिव्य चेतना में स्थित रहते हैं।

स्वसुखनिभृतचेतास्तद्व्युदस्तान्यभावो-  
ऽप्यजितरुचिरलीलाकृष्टसारस्तदीयम् ।  
व्यतनुत कृपया यस्तत्त्वदीपं पुराणं  
तमखिलवृजिनघ्नं व्याससूनुं नतोऽस्मि ॥ ६९ ॥

शब्दार्थ

स्व-सुख—अपने सुख में; निभृत—एकाकी; चेताः—चेतना वाला; तत्—उसके कारण; व्युदस्त—परित्यक्त; अन्य-भावः—अन्य की चेतना; अपि—यद्यपि; अजित—न जीते जा सकने वाले प्रभु, श्रीकृष्ण की; रुचिर—सुहावनी; लीला—लीलाओं से; आकृष्ट—आकर्षित; सारः—जिसका हृदय; तदीयम्—भगवान् के कार्यकलापों से युक्त; व्यतनुत—विस्तृत, व्यक्त; कृपया—दयापूर्वक; यः—जो; तत्त्व-दीपम्—परब्रह्म का तेज प्रकाश; पुराणम्—पुराण

( श्रीमद्भागवत ); तम्—उनको; अखिल-वृजिन-घ्नम्—हर अशुभ वस्तु को नष्ट करने वाले; व्यास-सूनुम्—व्यासदेव के पुत्र को; नतः अस्मि—नमस्कार करता हूँ।

मैं अपने गुरु व्यासदेव पुत्र, शुकदेव गोस्वामी, को सादर नमस्कार करता हूँ। वे ही इस ब्रह्माण्ड की सारी अशुभ वस्तुओं को नष्ट करते हैं। यद्यपि प्रारम्भ में वे ब्रह्म-साक्षात्कार के सुख में लीन थे और अन्य समस्त चेतनाओं को त्याग कर एकान्त स्थान में रह रहेथे, किन्तु वे भगवान् श्रीकृष्ण की मनोहर तथा अत्यन्त मधुमयी लीलाओं के द्वारा आकृष्ट हुए। अतएव उन्होंने अत्यन्त कृपा करके इस सर्वश्रेष्ठ पुराण, *श्रीमद्भागवत*, का प्रवचन किया जो परब्रह्म का तेज प्रकाश है और भगवान् के कार्यकलापों का वर्णन करने वाला है।

तात्पर्य : शुकदेव गोस्वामी तथा उनकी परम्परा के अन्य महान् आचार्यों को सादर नमस्कार किये बिना, मनुष्य को *श्रीमद्भागवत* के दिव्य अर्थ में गहरे पैठने का सुयोग नहीं प्राप्त हो सकता।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के बारहवें स्कन्ध के अन्तर्गत “*श्रीमद्भागवत की संक्षिप्त विषय-सूची*” नामक बारहवें अध्याय के श्रील भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।